RESEARCH REVIEW JOURNALS
Volume-04
Issue-03
March-2019

ISSN: 2455-3085 (Online)
RESEARCH REVIEW International Journal of Multidisciplinary
www.rrjournals.com[UGC Listed Journal]

महिला सशक्तिकरण के संदर्भ में राजाराम मोहन राय के विचारों का मूल्यांकन

कमल सिंह

शोधार्थी – इतिहास विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर

ARTICLE DETAILS

Article History
Published Online: 13 March2019

Keywords
स्वर्णिम, दूरदर्शिता, कुरीतियों, परिष्कारक, पुनजार्गरण, महापुरूषों, देवदासियों, शरीरांत, व्यावहारिक–बोध, मुरालिस, परिचारिकाएँ।

ABSTRACT

इस तरह राजा राम मोहन राय ने हिन्दू समाज की कुरीतियों के घोर विरोधी होने के कारण 1828 में उन्होनें ब्रह्म समाज नामक एक नए प्रकार के समाज की स्थापना की तथा वे आजीवन रूढ़िवादी रिवाजों को दूर करने के लिए प्रयासरत रहे। उनके प्रयास आज भी सराहे जाते हैं। आज हम जिस युग में जी रहे हैं उसकी कल्पना समाज के महापुरूषों के बिना अधूरी है, इतिहास के कई स्वर्णिम पलों पर हमें ऐसे महापुरूषों की कहानी पढ़ने के मिलेगी जिन्होनें अपनी क्षमता, दूरदर्शिता और सूझ–बूझ से देश को नई राह दी। ऐसे ही महापुरूषों में से एक थे – राजा राम मोहन राय। वे अपनी विलक्षण प्रतिभा से समाज में फैली कुरीतियों के परिष्कारक और ब्रह्म समाज के संस्थापक के रूप में निर्विवाद रूप से प्रतिष्ठित हैं। राजा राममोहन राय सिर्फ सती प्रथा का अंत कराने वाले महान समाज सुधारक ही नहीं, बल्कि एक महान दार्शनिक और विद्वान भी थे। राजा राममोहन राय आधुनिक भारत के रचयिता के नाम से जाने जाते हैं। वे ब्रह्म समाज के संस्थापक थे, जो भारत का समाजवादी आंदोलन भी था। सती की प्रथा को बंद कराने में उनकी अहम भूमिका रही है। राजा राम मोहन राय एक महान विद्वान और स्वतंत्र विचारक थे, जिनका नाम आज भी भारतीय इतिहास के पन्नों में स्वर्ण अक्षरों में अंकित हैं और वे भारतीय पुनजार्गरण के संस्थापक युग पुरूष के रूप में प्रतिष्ठित हैं।

"हे राममोहन आज एक शताब्दी बाद सारा देश तुम्हे प्रणाम कर रहा है। मृत्यु का आवरण भेद कर अपना अक्षय दान देते जाओ जरा–जीर्ण में जगाओ प्राणों का स्पन्दन अपनी आत्मा के स्पर्श–मणि से व्याप्त मूढ़ता दूर करो, अभिनव–शक्ति का करो संचार।"

18वीं शताब्दी के अन्त में स्त्रियों की स्थिति अत्यन्त निम्न थी। उनको सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक क्षेत्र में काम करने की स्वतंत्रता तथा घूमने पर प्रतिबंध था। समाज में अनेक ऐसी कुप्रथाएँ थीं, जिनके कारण स्त्रियों की दशा बदतर होती गई। मध्यकाल से ही बाल विवाह का प्रचलन हो गया था। 19वीं शताब्दी तक यह प्रथा प्रचलित थी। इसके परिणामस्वरूप स्त्रियों के स्वास्थ्य पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और समाज में बाल–विधवाओं की संख्या बढ़ने लगी। बंगाल में इस प्रथा ने भंयकर रूप धारण कर लिया था। विधवाओं को पुर्नविवाह करने की अनुमति नहीं थी। उनके भोजन, कपड़ों, खान–पान सब पर प्रतिबंध थे। उनको सादा जीवन जीना पड़ता था। बंगाल में विधवाओं को अशुभ माना जाता था।[1]

समाज में देवदासी प्रथा प्रचलित थी। मंदिरों में अनेक कुंवारी कन्याओं को दानकर दिया जाता था। दक्षिण भारत के राज्यों में इस प्रथा का अधिक प्रचलन था। यहाँ देवदासियों को मंदिर के पुजारियों को प्रसन्न करने के लिए हर कार्य करना होता था। महाराष्ट्र के अनेक मजबूर कन्याओं को मंदिर के लिए समर्पित भावना से काम करना पड़ता था, इन्हें 'मुरालिस' कहा जाता था जो जीवन भर अविवाहित रहती थी। यह प्रथा उत्तर तथा मध्य भारत में भी अनेक स्थानों पर प्रचलित हो गई थी, जहाँ व्यावसायिक नर्तकियों को 'यवीन' कहा जाता था।

हिन्दू समाज में विशेषकर उत्तर भारत की उच्च जातियों में पर्दा प्रथा का प्रचलन था। मुस्लिम प्रभाव के कारण यह प्रथा प्रचलन में आई। बहुविवाह का भी प्रचलन था। यह प्रथा हिन्दू तथा मुसलमान दोनों में प्रचलित थी। बड़े जमींदारों, राजवंशों तथा धनाड्य परिवारों में बहुपत्नी प्रथा अपने भीषण रूप में प्रचलित थी। इस प्रथा के कारण स्त्रियों का जीवन तो नष्ट हुआ ही साथ ही समाज में व्यभिचार और अनैतिकता का बोलबाला हो गया।[2]

'सती' का शाब्दिक अर्थ 'अमर' अथवा 'सत्य पर अडिग रहने वाली' है। वस्तुतः पति की मृत्यु के बाद स्त्री का उसकी चिता में बैठकर शरीरांत करना ही सती–प्रथा का व्यावहारिक–बोध है। ऐसा समझा जाता था कि ऐसा करके वह स्त्री अपने सभी पापों का क्षय कर लेती है और स्वर्ग को प्राप्त करती है। मिश्र के पिरामिडों, मृत राजाओं के साथ उनकी प्रिय पत्नियाँ परिचारिकाएँ आदि मृतक के जीवन को सुखी रखने के लिए दफना दी जाती थीं। ऐसी प्रथाएँ यूनान, रोम आदि देशों में थीं। आर्यों के भारत आगमन पर यह उनमें प्रचलित तो नही थीं परन्तु इस विचार के अवशेष सम्भवतः उनमें पड़े थे और उन्होनें इसे प्रतीक रूप में लागू किया। ऋग्वेद के 'अग्ने' या 'अग्रे' शब्द को लेकर मतभेद है। इसका अर्थ यह है कि स्त्री अपने मृत पति के शव के साथ लेटती है। तत्पश्चात् उसे सम्बोधित किया जाता है कि "नारी उठो, पुनः इस संसार में आओ।" अथर्ववेद के अनुसार ही – 'नारी पति–शव के साथ चिता पर आरोहण करती है, परन्तु पुनः उसे उतर आने के लिए निर्देशित किया जाता है, तत्पश्चात् प्रार्थना की जाती है कि वह स्त्री, पुत्रों एवं धन का उपयोग करते हुए समृद्धि का

RRIJM 2015, All Rights Reserved

जीवन व्यतीत करे।' स्पष्ट है कि वैदिक काल में यदि सती प्रथा का कोई रूप था तो वह प्रतीकात्मक ही था।[3]

भारतवर्ष में सती प्रथा का प्रचलन बहुत पहले से था। अपने मौलिक रूप में सती–प्रथा अत्यन्त प्राचीनकाल से विद्यमान रही है पर उस समय उसमें स्वेच्छा आवश्यक थी। रामायण और महाभारत में ऐसे श्लोक अवश्य विद्यमान है, जिनमे सती प्रथा की सत्ता सूचित होती है। रामायण में वेदवती के ज्वलित जात वेदस (अग्नि) में अपने को गिरा देने का उल्लेख है। महाभारत से स्पष्ट है कि पाण्डु की मृत्यु के बाद उनकी पत्नी माद्री सती हो गई थी। कृष्ण के पिता वासुदेव की मृत्यु पर उनकी चारों पत्नियाँ देवकी, मद्रा, रोहिणी और मदिरा सती हो गयी थीं। सिकन्दर ने जब भारत पर आक्रमण किया, तो इस देश के अनेक जनपदों में सती प्रथा प्रचलित थी। गांधार और कठ जनपदों में इस प्रथा की सत्ता का उल्लेख ग्रीक विवरणों में विद्यमान है। चतुर्थ शती ई. के लगभग यह प्रथा काफी प्रचलित हो गयी थी।[4]

राजाराम मोहन राय के प्रयासो के फलस्वरूप व हिन्दू कट्टर पंथियों के विरोध के बावजूद ब्रिटिश सरकार द्वारा भारतवर्ष में सदियों से चले आ रहे नारियों के अमानुषिक सती–प्रथा को 4 दिसम्बर, 1829 ई. में विधिवत कानून बनाकर भारत में सती प्रथा को पूर्ण रूप से प्रतिबंधित कर दिया गया। सरकार द्वारा बनाया गया यह कानून हिन्दू धर्म के विरोध में नहीं बल्कि राजा राममोहन राय द्वारा नारी उत्पीड़न के संदर्भ में दिये गये तार्किक तथ्यों को जहाँ एक तरफ प्रतिफल माना जा सकता है, वहीं दूसरी तरफ ब्रिटिश सरकार को मानवीय संवेदना के प्रति लगाव का भी द्योतक कहा जा सकता है। इतना ही नहीं ब्रिटिश सरकार ने सती–प्रथा के उन्मूलन के साथ ही साथ भारतीय समाज में सदियों से चले आ रहे **बाल–विवाह** एवं **बहु–विवाह** जिससे भारत का नारी समाज सीधे प्रभावित हो रहा था, को भी कानून बनाकर उन्मूलित किया गया।[5] यह राजा राममोहन राय और उनके समकालीन समाज–सुधारकों के प्रयास का परिणाम रहा कि जहाँ देश से सती–प्रथा की समाप्ति हुई वहीं देश में **बाल–कन्याओं को बलिदान** किये जाने की अमानुषिक प्रथाओं को भी प्रतिबंधित किया गया। नारी–उत्थान के नायक राजा राममोहन राय ने नारी–शिक्षा को भी प्रोत्साहित किया। राजा राममोहन राय ने 1822 ई. में भारतीय समाज में नारियों के ऊपर हो रहे उत्पीड़न, उसके मानवीय अधिकारों पर प्रकाश डालने के लिए "The Encroachment on the Right of the Hindu Females" यह पुस्तक लिखकर प्रकाशित करवाया। राजा राममोहन राय का यह मानना था कि **नारियों को सम्पत्ति के अधिकार से बेदखल** मानना ही सामाजिक बुराईयों की जड़ थी। पति की मृत्यु के बाद पत्नी का सम्पत्ति में कोई अधिकार न रहे इसीलिए पति की मृत्यु के बाद उसे पति साथ जीवित ही जला दिया जाता था। बहु–विवाह के कारण दूसरी पत्नी का घर में **'सवत'** के रूप में आ जाने से पहली पत्नी को जो मानसिक प्रताड़ना होती थी, उसे राजा राममोहन राय ने जब अपने तर्कों के साथ ब्रिटिश सरकार के समक्ष रखा तो सरकार ने इस पर गंभीरता एवं बुद्धिमतापूर्ण विचार कर कानून के जरिये बहु–विवाह को भी सती–प्रथा की भांति प्रतिबंधित कर दिया।[6] इसके साथ ही साथ राजा राममोहन राय और अन्य समाज–सुधारकों की औचित्यपूर्ण मांग के आधार पर सरकार ने **कन्या के क्रय–विक्रय** को भी **निषिद्ध** घोषित कर दिया। इसके साथ ही साथ राजा राममोहन राय द्वारा स्थापित **'आत्मीय सभा'** में नारी–उत्पीड़न एवं अन्य सामाजिक कुरीतियों एवं बुराईयों को भी उन्मूलित कराये जाने हेतु विचार–विमर्श होता रहा। राजा राममोहन राय के समाज–सुधार मिशन को आगे बढ़ाते हुए राजा राममोहन राय के प्रमुख शिष्य पंडित रामचन्द्र विद्यावागीश ने **विधवा–विवाह** की जोरदार हिमायत की थी। आगे चलकर ब्रह्म–समाज के सदस्य पंडित ईश्वरचन्द्र विद्यासागर ने विधवा–विवाह को सामाजिक मान्यता दिलवाने में सफलता प्राप्त की थी।[7]

इस प्रकार हम देखते हैं कि मध्य–युगीन भारतीय समाज के अंधकार युक्त घटाटोप में रहकर भी राजा राममोहन राय ने सामाजिक–कुरीतियों के विरूद्ध जो आवाज उठायी वह किसी सामान्य व्यक्ति का प्रयास नहीं कहा जा सकता। बल्कि यह हमें मानने पर विवश कर देता है कि ईश्वर ने अपनी नाराब मख्लूक (नारी) के ऊपर हो रहे जुल्म व सितम की समाप्ति के लिए जहाँ राजा राममोहन राय को चुना वहीं भारतवर्ष में अत्याचार पर आधारित मुस्लिम शासन को ध्वस्त कर नियम व कानून पर विश्वास करने वाली अंग्रेजी जाति के लोगों को भारतवर्ष की शासन–सत्ता का मालिक बनाकर जहाँ एक तरफ मानवीय अधिकारों को कुचले जाने से बचाया वहीं समाज में व्याप्त धार्मिक–कुरीतियों, बाह्य–आडम्बरों तथा धार्मिक–रूढ़ियों को भारत से समाप्त करने के कानून बनवाये वहीं कश्मीर से लेकर कन्या–कुमारी तक टुकड़े एवं खेमों में बंटे भारतीय–राज्यों को एकीकरण के सूत्र में बांधने का ऐतिहासिक कार्य किया।[8] इस निमित्त हम भारतीय समाज–सुधार के जनक राजा राममोहन राय के प्रति शुक्रगुजार होने के साथ ही साथ ब्रिटिश सरकार के नियम और कानून पर आधारित शासन व्यवस्था के प्रति भी इस **शोध–पत्र** के माध्यम से धन्यवाद ज्ञापित करते हैं कि उनके प्रयासों से जहाँ भारतीय समाज अपनी पुरातन–जड़ता से उबरने में सफल हो सका है वहीं उनकी कुशल प्रशासनिक–नीतियों के कारण भारतवर्ष राजनीतिक रूप में एक **'एकीकृत'** राष्ट्र के रूप में अपनी पहचान बनाने में सफल हो सका है। आज ब्रिटिश सरकार द्वारा बनायी गयी नीतियों और अपने संघर्षों के बल पर भारतवर्ष लगातार विश्व के रंगमंच पर अपनी एक अलग पहचान बनाने में सफल हो रहा है।[9] हम अपनी इस सुखद स्थिति की बुनियाद में राजा राममोहन राय और ब्रिटिश सरकार की नीतियों और प्रयासों को **नमन्** करते हैं और ईश्वर से यह कामना करते हैं कि हमारा यह देश विकास के पथ पर आगे बढ़ता रहे तथा जिस प्रकार से राजा राममोहन राय ने सती–प्रथा, बहु–विवाह, बालिका क्रय–विक्रय के उन्मूलन के लिए प्रयास किये थे उन्हीं प्रयासों के सापेक्ष वर्तमान समय में महिलाओं पर हो रहे उत्पीड़न–यथा दहेज हत्या, सास द्वारा बहू का उत्पीड़न, कार्योजित महिलाओं के साथ उनके कार्यस्थल पर उत्पीड़न एवं भ्रूण–हत्या जैसे कलंकपूर्ण अपराधों की समाप्ति के लिए सरकार सख्त से सख्त कानून बनाये तथा इन अपराधों में सम्मिलित व्यक्ति/परिवार का सामाजिक एवं नैतिक वहिष्कार किया जाये जिससे समाज में देहज–हत्या, नारी उत्पीड़न और पैदा होने से पहले बच्चियों की हो रही हत्याओं (भ्रूण–हत्या) को रोका

जा सके। यही अपील और निवेदन इस शोध–पत्र की मांग है।[10]

निष्कर्ष :–

राममोहन राय ने बहु विवाह, बाल–विवाह, जात–पात, अस्पृश्यता और स्त्रियों को सम्पत्ति पर अधिकार, जैसे कई एक सामाजिक अन्यायों के विरूद्ध आंदोलन किया। वह स्त्रियों की स्वतंत्रता में विश्वास करते थे। उन्होनें बहुविवाह प्रथा के खिलाफ भी आवाज उठाई। उन्होनें कहा कि यह कानून बना दिया जाना चाहिए कि कोई भी हिन्दु पुरूष न्यायाधीश से लाइसेंस लिए बिना अपनी पहली पत्नी के जीवनकाल में दूसरा विवाह नहीं कर सकता। विधवा–विवाह के पक्ष में उनका मत था कि बाल विधवाओं को पुनर्विवाह की अनुमति मिलनी चाहिए। उन्होनें स्त्रियों को पुरूषों के समान अधिकार दिलाने का पुरजोर प्रयत्न किया। वे स्त्रियों को हीन दृष्टि से देखने वालों के इस तर्क से सहमत नहीं थे कि स्त्रियों का ज्ञान सीमित होता है। उन्होनें शिक्षा का भी समर्थन किया। प्रौढ़ विधवाओं को भी शिक्षित किया जाए ताकि वे आत्मसम्मान का जीवन व्यतीत कर सकें। नारी जाति के प्रति सम्मान उनके व्यक्तित्व की एक अभिन्न विशेषता थी।[11]

उन्नीसवीं शताब्दी के सामाजिक जीवन में राजाराम मोहन राय ने बहुविवाह, भ्रूण हत्या, बाल विवाह, विधवा विवाह इत्यादि का तीव्र विरोध किया। उन्हें 19वीं शताब्दी का सबसे बड़ा नारीवाद कहा जा सकता है। इस प्रकार राजा राममोहन राय ने समाज की उन समस्याओं को पहचाना, जो देश और समाज की प्रगति में बाधक बन रही थी।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :–

1. वरे, डॉ. एस. एल., भारतीय इतिहास में नारी, कैलाश पुस्तक सदन, भोपाल, संस्करण 2007, पृ.–157
2. प्रणवदेव, राजा राममोहन राय, आर.बी.एस.एस. पब्लिशर्स, जयपुर, प्रथम संस्करण – 2004, पृ.–27–29
3. दत्त, के.सी., राजा राममोहन राय (जीवन और दर्शन), लोकभारती प्रकाशन, प्रथम संस्करण 2010, पृ.–73–74
4. मालती, के.एम., स्त्री विमर्श : भारतीय परिप्रेक्ष्य, वाणी प्रकाशन, नई दिल्ली, प्रथम संस्करण 2010, पृ.–27
5. द्विवेदी, ओंकार नाथ, भारतीय संस्कृति एवं सभ्यता, प्रयाग पुस्तक भवन, इलाहाबाद, 1991, पृ.–16
6. घिल्डियाल, अच्युतानन्द, प्राचीन एवं आधुनिक भारतीय सामाजिक विचारक, विवेक घिल्डियाल, वाराणसी, पृ.–6
7. विद्यालंकार, सत्यकेतु, प्राचीन भारत का धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन, सरस्वती सदन, नई दिल्ली, चौथा संस्करण, पृ.–222
8. चौबे, झारखण्ड, मध्ययुगीन भारतीय समाज एवं संस्कृति, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान, लखनऊ, पृ.–67–68
9. कोलेट, मिस सोफिया, लाडू एण्ड लेटर्स ऑफ राममोहन राय, पृ.–50–55
10. जैन, एम.एस., आधुनिक भारत का इतिहास, पृ.–185
11. प्रणवदेव, राजाराम मोहन राय, आर.बी.एस.एस. पब्लिशर्स, जयपुर, पृ.–81–82